RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

बौद्ध पर्यावरण नीति मूल्य

डॉ. रंजना रानी सिंघल

एसोशिएट प्रोफेसर, एच.ओ.डी. बौद्ध अध्ययन विभाग, सत्यवती कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

मानव या कोई भी जैविक प्राणी चाहे वह जल, वायु अथवा पृथ्वी पर रहता हो उसके रहन–सहन के बारे में अध्ययन करने पर पता चलता है कि उनके रहने के लिए जल, वायु, भोजन और आवास की आवश्यकता पड़ती है और फिर साथ–साथ आवश्यकतानुसार उनका वातावरण बनता जाता है। यही वातावरण बाद में उनके जीवन का अभिन्न अंग बन जाता है। मनुष्य के चारों तरफ का वातावरण जिससे वह प्रभावित होता है, उसे हम 'पर्यावरण' कहते हैं। जीवन और पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं। जीवधारियों का अस्तित्त्व पर्यावरण पर आधारित है। प्रत्येक जीव अनुवांशिकी तथा पर्यावरण का संयुक्त प्रतिफल है। पर्यावरण के प्राकृतिक साधन जितने ही स्वच्छ और निर्मल होंगे, हमारा शरीर और मन भी उतना ही स्वस्थ एवं स्वच्छ होगा। इसीलिए प्राचीन भारतीय समाज में कहा गया था कि प्रकृति हमारी माँ है, जो सभी कुछ अपने बच्चों को अर्पित कर देती है। इसीलिए कहा गया है कि साम्राज्य की स्थिरता, पर्यावरण की स्वच्छता पर निर्भर करती है। लब्ध–प्रतिष्ठित वैज्ञानिक लोमार्क तथा डारविन आदि ने पर्यावरण को जीवों के विकास में महत्त्वपूर्ण कारण माना है।

बुद्ध और पर्यावरणः–

भगवान् बुद्ध के जन्म से परिनिर्वाण काल तक उनकी गतिविधियों को देखते हुए भगवान् बुद्ध को पर्यावरण की रक्षा का प्रथम पथ प्रदर्शक तथा उपदेशक कहा जाय, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। भगवान् बुद्ध के समान प्रकृति–प्रेमी, पर्यावरण– रक्षक विरले ही हुए हैं। भगवान् बुद्ध का जन्म, बोधि–प्राप्ति, प्रथम उपदेश देने तथा महापरिनिर्वाण की घटना अक्षरशः यह सिद्ध करते हैं कि वे पर्यावरण रक्षण के महान् समर्थक, उद्धारक व प्रणेता थे। भगवान् बुद्ध किसी भी परिस्थिति में जंगलों को उजाड़ने की बात नहीं करते थे, बल्कि समय–समय पर वे राजाओं व सामान्य लोगों को नये वृक्ष लगाने के लिए प्रेरित करते रहते थे। उनकी ही प्रेरणा से अनेकों अम्बवन अस्तित्त्व में आये थे। वे हमेशा भिक्खुओं को कहते थे ''भिक्खु ध्यान करो, अरण्य में जाकर एकांत में वृक्षों के नीचे पालथी मारकर शरीर को सीधा कर बैठ जाओ और आते–जाते श्वास पर मन केन्द्रित करके विपश्यना पथ पर बढते चले जाओ।'' भगवान् बुद्ध की जीवन लीला यह सिद्ध करती है कि पर्यावरण की रक्षा के बिना मानव कल्याण की बात सोचना निरर्थक थी। मनुष्य मानव कल्याण की कल्पना तभी कर सकता है, जब उसका जन्म, ज्ञान प्राप्ति, जीवन की अन्तिम यात्र, स्वच्छ वातावरण एवं शुद्ध पर्यावरण के बीच सम्पन्न हो। भगवान् बुद्ध लगभग 45 वर्षों तक पैदल विचरण कर स्वच्छ हवा में श्वास लेने के साथ–साथ बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय धम्म का संदेश देते रहे। भगवान् बुद्ध के द्वारा बताया गया पर्यावरण रक्षा का संदेश विश्व के लिए ऐसी अमूल्य धरोहर है, जिसके सहारे सम्पूर्ण विश्व का कल्याण निश्चित है। स्वच्छ वातावरण एवं शुद्ध पर्यावरण के बीच ही स्वच्छ तन, मन, ज्ञान और निर्वाण की प्राप्ति सुलभ है। यही भगवान् बुद्ध का संदेश है। नरसिंह और शाक्य सिंह भी भगवान् बुद्ध के पर्यायवाची नाम हैं। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भगवान् बुद्ध ऐसे प्रथम व्यक्ति हैं, जिनको छब्बीस सौ (2600) वर्ष पूर्व भी 'सिंह' शब्द से सम्बोधित किया गया था। बुद्ध के समय के लोगों को इस बात का स्पष्ट ज्ञान था कि सिंह अर्थात् शेर जंगल का सबसे शक्तिशाली पशु होता है। उसी प्रकार सबसे अधिक प्रबल प्रज्ञा के धनी होने के कारण भगवान् बुद्ध के नाम के साथ सिंह शब्द जोड़ा गया था। पशुओं एवं वन्य–प्राणियों को महत्त्व प्रदान करने की दिशा में इससे अधिक सशक्त माध्यम और क्या हो सकता है?

आज जिस पर्यावरण की रक्षा के लिए सारा विश्व प्रचार कर रहा है, उसका संकेत आज से लगभग ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व महाकारूणिक भगवान् तथागत सम्यक सम्बुद्ध के जन्म के समय से ही मिलता है।[i] आज संसार को आवश्यकता है, उनके द्वारा बताए गए पर्यावरण के संरक्षण के मार्ग पर चलने की भगवान् बुद्ध एक क्षत्रिय राजकुमार थे। उनका जन्म तो राजमहल के सभी सुख–साधनों से भरपूर प्रसूति गृह में होना चाहिए था। परन्तु ऐसा न होकर उनका स्वाभाविक जन्म देवदाह के मार्ग में पड़ने वाले लुम्बिनीवन नामक स्थान के वनों से घिरे एक शाल–वृक्ष के नीचे हुआ। जैसा कि कहा भी जाता है कि जिस व्यक्ति का जन्म जैसे वातावरण में होता है, वह जीवन भर उसी वातावरण को पसन्द करता है। भगवान् बुद्ध का जन्म सिद्धार्थ के रूप में इसी प्रकृति की अनमोल छटा के बीच दो शाल वृक्ष की शीतल छाँव में हुआ। अतः हम देखते हैं कि भगवान् बुद्ध का जन्म से लेकर परिनिर्वाण तक का सारा जीवनकाल प्रकृति की गोद में ही बीता। उनका मन राजमहल की चार दीवारी के मध्य एकदम नहीं लगता था। बल्कि वे राजमहल की तुलना में बगीचे में खेलना अधिक पसन्द करते थे। बचपन में एक दिन राजमहल से निकलकर वे एक जामुन के वृक्ष के नीचे ध्यान लगाकर बैठे हुए थे। राजमहल परिवार उनकी इस स्थिति को देखकर आश्चर्य चकित रह गया था।

भगवान् बुद्ध के ज्ञान प्राप्ति का स्थान बोधगया को आज सारा संसार जिस रूप में देख रहा है, उस समय बोधगया का रूप ऐसा नहीं था। कभी यहाँ प्रकृति की अनुपम छटा विद्यमान रहती थी। निरंजना नदी को चारों ओर से वनों की छटा शोभित किए हुए थी। महाभिनिष्क्रमण के पश्चात् बोधि सत्व ने अपनी तपस्या के 6 वर्ष निरंजना नदी के तट पर जंगलों से घिरे प्रकृति की गोद में ही बिताए थे। छह वर्षों तक उनके प्राण सुरक्षित रखने का एकमात्र साधन शुद्ध वातावरण ही तो था। गिरि–कंदराओं में वृक्षों की

RRIJM 2015, All Rights Reserved

शीतल छाया में बहती नदी, झरनों के किनारे प्रकृति की गोद में, चारों ओर विस्तीर्ण पर्यावरण में उन्होंने अनुत्तर सम्बोधि ज्ञान की खोज की। अंत में उन्हें दुःख मुक्ति का मार्ग वैशाख पूर्णिमा की पावन रात में एक पीपल के वृक्ष (बोधिवृक्ष) के नीचे प्राप्त हुआ। उसे ही हम 'बोधिद्रुम' भी कहते हैं। भगवान् बुद्ध उस वृक्ष के प्रति इतने कृतज्ञ थे कि एक सप्ताह तक लगातार वे उस वृक्ष को अनिमिष (बिना पलकें झपके हुए) ध्यान में ध्यानस्थ होकर देखते रहे।

''अथ खो भगवा बोधिरूक्ख भूले सन्नाहं
एक पल्लंकेन निसीद, विमुक्ति सुख।''[ii]

बोधि–प्राप्ति के बाद भगवान् बुद्ध ने प्रथम सप्ताह बोधिवृक्ष के नीचे ही बिताया। दूसरे सप्ताह वे उसी के समीप पूर्वोत्तर दिशा में चलकर अनिमेष दृष्टि से बोधिवृक्ष की ओर देखते रहे। आज इसी स्थान पर ईंटों से बना 55 फुट ऊँचा 'अनिमेष लोचन' नामक चैत्य बना हुआ है। तीसरा सप्ताह भगवान् बुद्ध ने चक्रमण करते हुए बिताया। आज महाबोधि मंदिर के उत्तर दिशा वाली दीवार से सटा हुआ जो 60 फुट लम्बा और 3 फुट ऊँचा चबूतरा है, वह भगवान् की 'चंक्रमण भूमि' को घोषित करता है। इस चबूतरे पर कमल के फूलों के प्रतीक स्वरूप भगवान् बुद्ध के विमल–निर्मल चरण अंकित है। चौथा सप्ताह भगवान् बुद्ध ने उस स्थान पर बिताया था, जहाँ आज 'रत्नधर' नामक चैत्य बना हुआ है। पाँचवाँ सप्ताह 'अजपाल' नामक बरगद के पेड़ के नीचे बिताया। सातवाँ सप्ताह भगवान् बुद्ध ने 'राजयतन' नामक वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए बिताया। उरूवेला के समीप निरंजना नदी के तट पर सुप्रतिष्ठित तीर्थ नामक घाट था, जहाँ भगवान् ने बुद्धत्त प्राप्ति के पूर्व स्नान किया था।

बोधिवृक्ष के नीचे भगवान् बुद्ध को जिस बुद्धत्त्व (ज्ञान) का साक्षात्कार हुआ था, उसका उपदेश भगवान् बुद्ध ने सर्वप्रथम सारनाथ इसिपतन मृगदाय में एक आम के पेड़ के नीचे बैठकर पंचवर्गीय भिक्खुओं को दिया। यह स्थान सारनाथ का एक रमणीय स्थान अंजनवन मृगदाय था। अंजन अर्थात् काजल के समान काली सघन वृक्ष–छाया व छांवदार वृक्षों और पुष्पों से सुशोभित होने के कारण यह वन 'अंजनवन' कहलाता था। यहाँ इसिपतन मृगदाय के मध्य मृगस्वच्छन्दता से विचरते थे। इसलिए यह मिगदाय अर्थात् मृगदाय कहलाता था। सारनाथ के समीप दूसरा वन 'कंटकीवन' था। अट्ठकथाओं[iii] में इसे 'गहाकरमण्ड वन' कहकर भी पुकारा गया है। इस वन में भगवान् ने सारिपुत्र, महाभोग्गल्लान और अनुरुद्ध के साथ निवास किया था।

भगवान् बुद्ध तथा उनके पंचवर्गीय भिक्खु अपने विशाल भिक्खुसंघ के साथ साल में तीन महीने छोड़कर शेष समय वनों, जंगलों और कंदराओं में विहार करते रहे। भगवान् बुद्ध ने अपने पैंतालिस वर्षावास जिन–जिन स्थानों पर व्यतीत किए थे। वे सभी थान पुष्पाच्छादित वृक्षों तथा घने वनों से घिरे हुए थे, मन्द–मन्द शीतल व शुद्ध वायु एवं स्वच्छ जल धारा इसके समीप सदा प्रवाहित होती रहती थी। भगवान् बुद्ध ने 80 वर्ष की अवस्था तक धर्म प्रचारार्थ विहार करते हुए व्यतीत किए। 'महापरिनिब्बान सुत्त' के अनुसार परिनिर्वाण के समय भगवान् बुद्ध वैशाली के समीप वेलुव ग्राम में विहार करते हुए यहाँ अत्यधिक बीमार हो गए। ऐसी अवस्था में उन्होंने कुशीनगर को प्रस्थान किया। वास्तविकता यह थी कि भगवान् प्रकृति की गोद में शुद्ध वातावरण के बीच चिर निद्रा को प्राप्त होना चाहते थे। कुशीनगर के दक्षिण–पश्चिम दिशा में उसके समीप ही मल्लों को 'उपवतन' नामक शालवन था, जो हिरण्यवती नदी के दूसरे किनारे पर स्थित था। इसी उपवतन शालवन में भगवान् ने अंतिम निवास किया और यहीं युगल शाल वृक्षों के नीचे महापरिनिर्वाण प्राप्त किया। मानव समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। बल्कि वास्तविकता यह है कि उन्होंने अपना समस्त जीवन वनों एवं वन्य जीवनसे सम्बन्धित मिथ्या धारणाओं का खण्डन करते हुए उनके संरक्षण के कार्य को ईमानदारी से करते रहने का नियम बनाया। इस प्रकार तथागत के जीवन के विभिन्न पहलू वृक्षों से सीधा मेल खाते हैं लुम्बिनीवन में शाल वृक्षों की शीतल छाया में सिद्धार्थ गौतम का जन्म हुआ, पीपल (बोधिवृक्ष) के नीचे बोधगया में ज्ञान प्राप्ति, कुश–घास से ऊपर बैठकर ध्यान–साधना और विपश्यना (एक नई जीवन शैली) का अविष्कार, आम के वृक्ष के नीचे सारनाथ में भिक्खुसंघ को प्रथम उपदेश (धम्म चक्र प्रवर्तन) बरगद, बाँस, छेवला ढाक आदि वृक्षों से युक्त घने जंगलों में भिक्खु संघ को उपदेश और दो शाल वृक्षों की छाया में कुशीनगर में महापरिनिर्वाण की प्राप्ति। तथागत के बाद भिक्खुओं ने जीवन शैली को विभिन्न रूपों में तथागत के काल्पनिक पुनर्जन्मों को विभिन्न योनियों में जातकों[iv] के रूप में उतारा जिन्हें लकड़ी शिलाओं शैल–चित्रों आदि पर उतारकर आने वाली पीढ़ी का मार्ग दर्शन करने को उचित प्रबन्ध कर दिया।

बहुत हर्ष होता है जब हमें इस बात का ज्ञान होता है कि भगवान् बुद्ध का नाम पर्यावरण के मार्गदर्शक के रूप में भी बहुत आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है। विज्ञान के नाम पर की गई आधुनिक प्रगति से किसकी आँखे चकाचौंध नहीं हो रही। इन्हीं नई–नई वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण मानव जीवन का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया जान पड़ता है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो इन वैज्ञानिक विकासों ने हमें विनाश के उस कगार पर पहुँचा दिया है जहाँ हमें अपनी आश्रदायी पृथ्वी का अस्तित्व ही संकट में पड़ा दिखाई दे रहा है। आज सारी सरकारें धार्मिक व समाजसेवी संस्थाएं एवं वैज्ञानिक पर्यावरण के प्रति सजग होकर अपने अस्तित्त्व को बचाने के प्रयास में जुट गये हैं। यह एक शुभ लक्षण है कि पर्यावरण की चिन्ता से प्रेरित होकर अनेक संगठन व समाजसेवी और वैज्ञानिक पृथ्वी की सुरक्षा के लिए विविध उपायों पर गहन विचार कर रहे हैं।

पिछली शताब्दियों में पशु–पक्षियों के प्राणों पर बहुत संकट रहा। शिकार के नाम पर निरीह पशुओं का खुलेआम वध किया जाता था। जंगल में जाकर निहत्थे पशुओं का आखेट करना हमारे देश के राजा–महाराजाओं के समय गौरव की बात समझी जाती थी। इसी कुकृत्य का परिणाम है जो आज हम पर्यावरण के संतुलन के बिगड़ जाने से उत्पन्न अनेकों अभिशापों को भोग रहे हैं। आज के युग में वन्य–जीवन संरक्षण के लिए अनेकों उपाय किये जा रहे हैं, किन्तु अब से ढाई हजार वर्ष पहले ही भगवान् बुद्ध ने वन्य प्राणियों अथवा पालतू प्राणियों के संरक्षण के लिए विशेष प्रकार की प्रेरणा से अभिभूत होकर आन्दोलन चलाया था। उस समय भी यज्ञ के नाम पर हजारों पशु–पक्षियों, वृक्षों एवं

खाद्यान की आहुति दी जाती थी। भगवान् बुद्ध बिना हिंसा के यज्ञ का प्रचार कर रहे थे।[v]

जब राजकुमार सिद्धार्थ को गृहत्याग के समय नगर को छोड़कर जंगल में जाना पड़ा तब मानव समुदाय के अतिरिक्त जंगल में पेड़–पौधे वनस्पतियों के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षियों का साथ मिला और शुरू में हाथी बन्दर हिरणों ने राजकुमार की सहायता की। इस प्रकार का मानव एवं पशु–पक्षियों का सन्निध्य एक ऐतिहासिक घटना है। इस प्रकार की समरसता का दूसरा प्रमाण हमें सरलता से देखने को नहीं मिलता। पशुओं के प्रति भी इतनी भावना, इतनी मैत्री आजकल कहाँ देखने को मिलती है। भगवान् बुद्ध और बौद्ध धर्म मानव इतिहास में इस बात के लिए सदा आदर के साथ स्मरण किए जाएंगे कि उन्होंने अपने युग में यज्ञ के नाम पर होने वाली पशु हिंसा को समाप्त करवा दिया था।

एक बार कूटदन्त नामक एक ब्राह्मण ने भगवान् की शिक्षा के बारे में सुना, तो वह भगवान् के पास आया और प्रश्न किया ''भगवान् यज्ञ के बारे में आपका क्या मत है भगवान् बोले,''हे ब्राह्मण! अब जो कुछ मैं कह रहा हूँ, उसे ध्यान से सुनो। न मैं हर 'यज्ञ की प्रशंसा करता हूँ न मैं हर 'यज्ञ को सदोष कहता हूँ। हे ब्राह्मण! जिस किसी भी यज्ञ में गो–हत्या हो, बकरियाँ और भेड़ें मारी जायें मुर्गे–मुर्गियों और सूअर मारे जायें और भी दूसरे नाना तरह के प्राणियों की हत्या हो– इस प्रकार का 'यज्ञ जिसमें पशु–बलि दी जाती हो, हे ब्राह्मण! मेरी प्रशंसा का पात्र नहीं।'' लेकिन ''हे ब्राह्मण! जिस यज्ञ में गो–हत्या नहीं होती, पशुओं की हत्या नहीं होती, ऐसा यज्ञ मेरी प्रशंसा का पात्र है। ऐसा यज्ञ जिसमें पशुओं की बलि नहीं दी जाती। उदाहरण के लिए चिर–स्थापित दान या परिवार के सदस्यों के कल्याण के लिए त्याग।'' ऐसे यज्ञ के श्रेष्ठजन भी पास जाते हैं। जो जन्म–मरण के बन्धन से मुक्त है, वे ऐसे कुशल यज्ञ की प्रशंसा ही करते हैं। श्रद्धायुक्त चित्त से, श्रद्धा युक्त कर्म में पुण्य क्षेत्र में, जो बीज बोया जाता है, अथवा श्रेष्ठ जीवों को जो दान दिया जाता है उससे देवता भी प्रसन्न होते हैं। इस प्रकार के दान से विज्ञजन विद्या का लाभ भी अर्जित करते हैं, व दुःख से मुक्त हो, सुखी अवस्था को प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार भगवान् बुद्ध के जीवन की घटनाओं और उपदेशों में पर्यावरण नीति को संक्षेप में हम इस प्रकार व्यक्त करते है। वास्तव में बौद्ध धम्म के विकास में कृषि, वन, वृक्ष और पर्यावरण का बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कुमार सिद्धार्थ (भगवान बुद्ध) का जन्म जिस परिवार में हुआ था, उसका मुखिया एक बहुत सम्पन्न कृषक (किसान) ही होता था। जिनके अधीन बहुत से बड़े–बड़े खेत होते थे । बौद्ध धम्म का सूक्ष्म अध्ययन करने से हमें पता चलता है कि सिद्धार्थ के पिता का नाम शुद्धोधन था। शुद्धोधन का अर्थ होता है– शुद्ध–ओदन (चावल)। कृषि प्रधान परिवार एवं वातावरण होने के कारण ही उनके नाम तक भी कृषि विषयक ही होते थे। सिद्धार्थ कुमार के बाल्यकाल का अध्ययन करते समय हमें खेत जोतने के उत्सव का भी पता चलता है। यही कारण है कि भगवान् बुद्ध के उपदेशों में कृषि, वन और वृक्ष के उदाहरण भरे पड़े हैं। इस प्रकार बौद्ध धर्म की दृष्टि से देखें तो भारत गाँवों में रहता है, इसी धारणा को आधार मानकर तथागत गौतम बुद्ध ने मानव को प्रकृति के बहुत करीब तक पहुँचाया, और मानव–कल्याण का नया रास्ता प्रशस्त किया। इस प्रकार बौद्ध धम्म संसार का अकेला और अब तक का एक मात्र धम्म पथ है, जो पेड़–पौधों, मानव, पशु–पक्षियों और प्रकृति से एकदम निकट का रिश्ता स्थापित करने वाला सिद्धान्त है, जिसमें सदृश्य एवं अदृश्य सभी प्रकार के जीव जन्तुओं के कल्याण की व्यवस्था विद्यमान है। अतः हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि भगवान् बुद्ध द्वारा स्थापित यह धम्म कृषि, वन–वृक्षों एवं पशु पक्षियों से सीधे रूप में अथवा अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

त्रिपिटक में पर्यावरण का वर्णन

भगवान् बुद्ध के उपदेशों का उद्देश्य मानव का कल्याण है, जो पर्यावरण के प्राकृतिक तथा सामाजिक रूपों में सन्निहित है। इस दृष्टि से देखा जाए तो शास्ता के समस्त उपदेश, जो त्रिपिटक में सन्निहित है, पर्यावरण को ही केन्द्र में रखकर उपदिष्ट प्रतीत होते हैं।

धम्मपद

यदि हम मात्र 'धम्मपद' नामक ग्रंथ का ही अवलोकन करें, तो हम पाते हैं कि इस ग्रंथ में चार सौ तेईस उपदेश हैं, उनमें से ढाई सौ उपदेश पशु–पक्षी, वृक्ष उसके उत्पादन और प्रकृति को ही आधार बनाकर कहे गये हैं। इसमें भगवान् के समस्त् उपदेश पर्यावरण संरक्षण के लिए ही उपदिष्ट है। उनके उपदेशों का मूल सार ही अकुशल धर्मों से ही विरत् रहना है और कुशल धर्मों का सम्पादन है। प्रस्तुत सन्दर्भ में अकुशल धर्म 'प्रदूषण' का सूचक है तथा कुशल धर्म प्रदूषण रहित 'शुद्ध पर्यावरण' का द्योतक है। प्रदूषण की उत्पत्ति अंतः मन का ही परिणाम है। इसके लिए हमें शास्ता के बताये उपदेशों का अनुसरण कर पाप धर्मों से अलग रहना होगा। कुशल, पथ पर चलना होगा तथा मन को परिशुद्ध करना होगा, तभी हम मानव प्रदूषण मुक्त समाज बना सकते हैं। जो असंभव नहीं है। तभी तो भगवान् बुद्ध ने धम्मपद में कहा है–

'सब्ब पापस्स अकरण, कुसला–स उपसम्मा सचित्त परियोदनं एवं बुद्धान सासनं।''[vi]

थेरगाथा

थोरगाथा नामक प्रसिद्ध बौद्ध ग्रंथ में बौद्ध भिक्षुओं को अरण्य, नदी, गुहा आदि प्राकृतिक धरोहरों में ध्यानमग्न दिखाया है। थेरगाथा में दो सौ चौंतीस भिक्षुओं के उद्गार बारह सौ छिहत्तर (1276) गाथाओं में संकलित है। इस ग्रंथ में सुरम्य प्राकृतिक वर्णनों की अधिकता देखने को मिलती है। भिक्खुओं के आंतरिक जीवन का एक जीवंत वर्णन हमें 'स्थविर तालपुट' के उद्गार में मिलता है। 'स्थविर तालपट' अपने मन को सम्बोधित करते हुए कहते हैं, 'हे चित्त! जैसे फल कि इच्छा करने वाला मानव वृक्ष को लगाकर उसकी जड़ को ही तोड़ने की इच्छा करे, उसी प्रकार हे चित्त! मुझको चल और अनित्य इस संसार में लगाकर तू वैसा ही आचरण कर।'

RRIJM 2015, All Rights Reserved

पर्वत गुफाओं में ध्यान करते हुए अनेकों भिक्खुओं के वर्णन हमें थेरगाथा में मिलते हैं। पांशुकूलधारी (चिथड़ों से बना चीवर पहनने वाला) भिक्खु पर्वत गुफा में सिंह के समान सुशोभित है। इसी प्रकार भिक्खु की अचल, ध्यानस्थ अवस्था का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार सुदृढ़ पर्वत निश्चल और सुप्रतिष्ठित होता है, उसी प्रकार जिस भिक्खु का काम, क्रोध, मोह नष्ट हो चुका है, वह अचल पर्वत के समान कम्पायमान नहीं होता। भिक्खुओं ने अपनी साधना में प्रकृति का कितना सहयोग लिया था, इसका भी दिग्दर्शन बौद्ध साहित्य के विभिन्न ग्रंथों में मिलता है। बौद्ध साहित्य में इस प्रकार वन्य और पर्वत दृश्यों तथा वर्षा और शरद आदि ऋतुओं में जितने सुन्दर वर्णन प्रसंगवश आ गए हैं, वे उसकी एक विभूति बन गये हैं।

डॉ. विन्टरनिट्ज ने 'थेरगाथा' के प्राकृतिक वर्णनों को 'भारतीय गीति काव्य के सच्चे रत्न' कहा है। भिक्खुओं, भिक्खुणियों का जीवन प्रकृति में गहन रूप से सम्बन्धित था। पर्वत, गुहा, नदी, तट, वन, पुआल–पुंज अथवा किसी छाई हुई या बिना छाई हुई कुटिया में ध्यान करते हुए भिक्खुओं को वर्षा शीत आदि ऋतुओं के परिवर्तन का और पृथ्वी और आकाश के अनेक रंगो–रूपों के परिवर्तन का साक्षात् अनुभव होता था। प्रकृति के अनेक रूपो की प्रतिक्रिया उनके चित्त पर कैसी होती है इसके अनेक जीवन्त वर्णन 'थेरगाथा' में देखने को मिलते हैं। उनमें से उदाहरण स्वरूप कुछ का वर्णन इस प्रकार है–[अपप]

एक बार सुभूति नामक भिक्खु राजगृह जा खुले स्थान में रहने लगे। वर्षा का समय था, लेकिन वर्षा नहीं होती थी। सब ओर अकाल की स्थिति हो गई। राजा बिम्बिसार को जब पता चला तो उन्होंने सुभूति स्थविर के लिए पर्णकुटी (पत्तों से ढकी हुई कुटिया) बनवा दी, उसमें प्रवेश करते ही वर्षा प्रारम्भ होने लगी। कुटी में बैठ कर लोगों के हित के लिए वर्षा का आह्वान करते हुए सुभूति ने इस उदान को कहा– 'मेरी कुटी छाई हुई सुखदायी तथा वायु से सुरक्षित है, बरसो हे देव, सुख से बरसो। मेरा चित्त अच्छी तरह से समाधिस्थ है, निर्वाण के लिए उद्योग चल रहा है। बरसो हे देव, सुख से बरसो। अतः ध्यान का सुख ही भिक्खुओं के लिए ही सबसे बड़ा सुख है और प्रकृतिक सौंदर्य उसके लिए ध्यान का उद्दीपन बनता है।

मिलिन्द पञ्हो

बौद्धों का एक और महान ग्रंथ है– 'मिलिन्द प्रश्न। इस ग्रंथ में महाराज मिलिन्द (ग्रीक राजा मेनान्डर) और आचार्य नागसेन के मध्य हुए प्रश्न–उत्तरों का ब्यौरा उपलब्ध है। इस ग्रंथ के अंत में बहुत ही ज्ञानवर्धक अध्याय दिया गया है। जिसे पढ़कर अत्यधिक आश्चर्य होता है कि आज से छबीस सौ (2600) वर्ष पूर्व बौद्ध विद्वानों ने पशु–पक्षी, वन–वृक्ष और प्रकृति की इतनी सूक्ष्म विवेचना की थी, प्रत्येक गुणवगुणों की व्याख्या की गई है, जिसके सामने आज का आधुनिक विज्ञान का अध्ययन भी परास्त है।[अपपप]

जैसे गदहे का एक गुण अर्थात् गदहा जहां कहीं कूड़े–करकट पर, चौक–चौराहे पर या गांव के द्वार पर या भूसे के ढेर पर जैसी भी जगह मिले, वहीं लेट जाता है। वहीं पर निश्चित हो सो नहीं जाता, बल्कि सोते हुए भी सचेत रहता है। उसी प्रकार साधना में रत बौद्ध भिक्खु को कहीं भी, चाहे चटाई, पत्ते की चटाई, काठ कि चौकी या धरती पर लेट कर निश्चिंत हो सो नहीं जाना चाहिए, अपितु गदहे की भांति सोते हुए भी सचेत रहना चाहिए। इस प्रकार एक सौ चार (104) पशु–पक्षियों अथवा वृक्ष–वनस्पतियों के गुणवगुणों का रोचक वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार एक सौ चार (104) पशु–पक्षियों के गुणों का अनुशीलन करके ही कोई भिक्खु परम्पद 'अर्हत्' प्राप्त कर सकता है।

इसी प्रकार गिलहरी का एक गुण आदर्श भिक्खु में होना चाहिए। वह एक गुण क्या है? जैसे किसी शत्रु के आने पर गिलहरी अपनी पूंछ को जमीन पर पटक–पटक कर फुला देती है उसी से भयभीत करके शत्रु को भगा देती है, वैसे ही विपश्यना अथवा योग साधना करने वाले भिक्खु को क्लेश रूपी शत्रु के निकट आने पर स्मृति–प्रस्थान रूपी लाठी पटक–पटक उसे भगा देना चाहिए। गिलहरी का यही एक गुण आदर्श भिक्खु में होना चाहिए।

इसी प्रकार भिक्खु में बांस का एक गुण होना चाहिए। वह एक गुण क्या है? जैसे जिस ओर से हवा बहती है, उसी ओर बांस झुक जाता है किसी दूसरी ओर नहीं जाता। वैसे योग साधना में रत् भिक्खु को नव–अंगों वाले बुद्ध उपदेश के अनुसार ही व्यवहार करना चाहिए, प्रतिकूल नहीं। श्रमण का यही धर्म है कि भिक्खु में बांस का यह एक गुण होना चाहिए।

इस प्रकार मिलिन्द प्रश्न नामक ग्रंथ में जो एक सौ चार (104) पशु–पक्षियों अथावा वृक्ष–वनस्पतियों के गुणवगुणों के रोचक वर्णन प्रस्तुत किया गया है, विषय विस्तार के भय से सभी का वर्णन यहां नहीं दिया जा रहा है। इससे सिद्ध होता है कि इस विषय के प्रति भी बौद्धों का दृष्टिकोण कितना विशाल था।

महाराजा अशोक भारत के चक्रवर्ती बौद्ध सम्राट हुए हैं। उन्होंने अपने राज्य में कल्याणकारी योजनाओं को पशु–पक्षियों के माध्यम से ही व्यक्त किया था। उनकी राजमुद्रा को देखिए, उसमें चार शेर चारों दिशाओं की ओर मुह करके एक–दूसरे से कमर सटाकर खड़े हुए हैं। इन शेरों को जीवन्त मुर्ति कला के माध्यम से दहाड़ते हुए दिखाया गया है। इतना ही नहीं, इस प्रतिमा के नीचे एक घोड़ा, एक हाथी, एक सांड़ व एक हिरण को दौड़ती हुई मुद्रा में दर्शाया गया है। यहां यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि हांथी, सिद्धार्थ के जन्म का प्रतीक है, घोड़ा, उनके महाभिनिष्क्रमण का, सांड़ उनकी महानता को प्रकट करता है, तो हिरण उनके द्वारा सारनाथ में पंचवर्गीय भिक्खुओं को दिए गए सर्वप्रथम प्रवचन (धम्मचक्कप्पत्तन सुत्त) को दर्शाता है।

बौद्ध धम्म में पुण्डरीक (कमल = पद्म) के फूल को बुद्ध के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया गया। अतः सद्धम्मपुण्डरीक महायानी बौद्धों का महान् ग्रंथ भी है। बौद्धजगत् के प्रसिद्ध ग्रंथ मिलिन्द प्रश्न (मिलिन्द पञ्हों पालि) का गहन अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि किसी भी भिक्खु द्वारा अर्हत् पद प्राप्त करने के लिए एक सौ पांच (105) पशु–पक्षियों, फल–सब्जियों, धातुओं तथा प्राकृतिक सामग्रियों से कुछ न कुछ गुण प्राप्त करने चाहिए।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

मिलिन्द पञ्हों नामक ग्रंथ के लक्खण पञ्हों नामक अध्याय में गुणावगुण के आधार पर वर्णित परिचय दिया गया है।

भन्तें नागसेन! किन गुणों को पाकर भिक्खु अर्हत्–पद का साक्षात्कार करता है?

महाराज! अर्हत् पद पाने के लिए भिक्खु में ये गुण होने चाहिए। इसमें आठ वर्ग में एक सौ पांच (105) पशु–पक्षी, फल, सब्जी, धातु और प्राकृतिक सामग्री से गुण बताये हैं। इस विस्तृत सूची के अध्ययन से पता चलता है कि भगवान् तथागत् सम्यक् सम्बुद्ध ने अपने भिक्खुओं के लिए कितने कड़े नियमों का निर्माण किया था। इस अध्ययन से निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उस समय के ऋषि–मुनि कितने अवगाहन–धर्मी एवं सूक्षमदर्शी होते थे। जो चींटी से लेकर महासागर तक की विशेषताओं का ज्ञान रखते थे। प्रत्येक वस्तु की अच्छाईयों का अवगाहन तो किया किन्तु उनके दोष एवं अभावों को तटस्थ भाव से त्याग दिया।

उदान कथाएं

आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व हमारे ऋषि–मुनियों को समुद्र के संबंध में कितना सूक्ष्म ज्ञान था, यह जानकर बहुत सुखद आश्चर्य होता है। बौद्धों के महान ग्रंथ त्रिपिटक के 'उदान' नामक ग्रंथ में महासमुद्र के गुणों का विशद् वर्णन मानवीय आचरण के साथ मेल बैठाते हुए दिया गया है। भगवान् बुद्ध ने अपने भिक्खुओं को संबोधित करते हुए कहा है कि जिस प्रकार महासमुद्र में आठ गुण है, इसी प्रकार इस धम्म विनय में आठ आश्चर्य और अद्भुत धर्म (गुण) हैं, जिन्हें देखकर भिक्खु इस धम्म विनय में रमण करते हैं, जो इस प्रकार हैं–[पग]

1. भिक्खुओं, जैसे महासमुद्र का गुण है कि वह क्रमशः नीचा और गहरा होता है, वैसे ही इस धर्म विनय में शिक्षा, क्रिया, प्रतिपदा सभी क्रमशः होते हैं।
2. भिक्खुओं! जैसे महासमुद्र स्थिर स्वाभाव वाला हो अपनी वेला का उल्लंघन नही करता, वैसे ही मैंने अपने श्रावकों को जिन शिक्षापदों का उपदेश किया है, उनका वे प्राणों के निकल जाने पर भी उल्लंघन नहीं करते।
3. भिक्खुओं! जैसे महासमुद्र अपने में कोई मृतक शरीर को नहीं रहने देता, उसे शीघ्र ही किनारे लगा देता है, वैसे ही जो पुरुष दुश्शील है, उसके साथ संघ नहीं रहता।
4. भिक्खुओं! जैसे संसार में, जितनी नदियां हैं, सभी महासमुद्र में गिरती हैं– आकाश से धाराएं भी गिरती हैं, सभी 'महासमुद्र' के नाम से जानी जाती है, वैसे ही क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शुद्र– चारों वर्णों के जो लोग धम्मविनय में घर से बेघर होकर प्रवज्जित होते हैं, अपने पहले नाम और गोत्र को छोड़ सभी 'बौद्ध–भिक्खु' इस एक नाम से जाने जाते हैं।
5. भिक्खुओं! जैसे सभी नदियों और धाराओं के महासमुद्र में गिरने से महासमुद्र की घटती–बढ़ती कुछ नहीं होती उसी प्रकार जितने भी भिक्खु निर्वाण को पा लें, निर्वाण वहीं रहता है। इस धम्म विनय का पांचवां धम्म है।
6. भिक्खुओं! जिस प्रकार महासमुद्र का एक ही रस है– खारापन, वैसे ही इस धम्म का एक रस है विमुक्ति–रस।
7. भिक्खुओं! जैसे महासमुद्र में अनेक रत्न भरे पड़े हैं, वैसे ही इस धर्म में अनेक रत्न भरे पड़े हैं, जैसे चार स्मृति प्रस्थान, चार सम्यक् प्रधान, चार ऋद्धिपाद, पांच इन्द्रियां, पांच बल, सात बोध्यंग, आर्य अष्टांगिक मार्ग आदि।
8. भिक्खुओं! जैसे महासमुद्र में बड़े बड़े जीव रहते हैं, वैसे इस धर्म विनय में भी बड़े–बड़े जीव रहते हैं। जैसे– स्रोतापन्न, स्रोतापत्ति फल की प्राप्ति के लिए मार्ग पर आरूढ़, सकृदागामी, सकृदागामी फल की प्राप्ति के लिए मार्ग पर आरूढ़, अनागामी, अनागामी–फल की प्राप्ति मार्ग पर आरूढ़, अर्हत्, अर्हत् फल की प्राप्ति के मार्ग पर अरूढ़।

इस प्रकार भिक्खुओं! इस धर्म विनय में यही आठ आश्चर्य अद्भुत धर्म है, जिन्हें देख–देखकर भिक्खु इस धर्म विनय में रमण करते हें।

भगवान् ने उदान में एक स्थान पर खद्योत (जुगनू) का उदाहरण देकर अपने धम्म की व्याख्या इस प्रकार से की है– ''वह भटक जाते हैं, सार को नहीं पाते और भी नये–नये बंधन में पड़ जाते हैं। जेसे पतंगें उड़–उड़कर दीपक में आ गिरते हैं, वैसे ही अज्ञजन दृष्ट और श्रुत वस्तु में आसक्त होते हैं।'' तभी तक खद्योत (जुगनू) टिमटिमाते हैं, जब तक सूरज नहीं उगता, सूरज के उगते ही उनका टिमटिमाना बंद हो जाता है, पता भी नहीं लगता कि वे कहां गए। इसी तरह दूसरे मत के साधुओं का टिमटिमाना है ,जब तक सम्यक् सम्बुद्ध संसार में पैदा नहीं होते, तब तक तार्किक और श्रावक नहीं सुलझते और न अज्ञानी लोग दुःख से मुक्त होते हैं।

आज से छब्बीस सौ (2600) वर्ष पूर्व भी भगवान् बुद्ध को इस बात का पूरा ज्ञान था कि आम खेती के लिए एक खेत में कौन सी विशेषताएं होनी चाहिए? बौद्धों के प्रसिद्ध ग्रंथ 'उदान' में यह वृतांत आता है कि जिसमें सारगर्भित रूप से प्रकाश डाला है, जिसमें कहा गया है कि आठ विशेषताओं से युक्त खेत में बीज बोने से महाफल होता है और भरपूर अन्न होता है। उसी प्रकार जो श्रम ब्राह्मण आर्य अष्टांगिक मार्ग की आठ विशेषताओं से युक्त होता है, उसी को दान देने से महाफल होता है।

खेतों की खर–पतवार के संबंध में प्राप्त की गई जानकारी कोई नई खोज नहीं है। वास्तव में भगवान् तथागत सम्यक् सम्बुद्ध ने आज से लगभग छबीस सौ (2600) वर्ष पूर्व खर–पतवार की उपमा देकर अपने भिक्खुओं को उपदेश देते हुए इस प्रकार कहा था– ''खेतों का दोष तृण (खर–पतवार) है। इसी तरह मनुष्यों का दोष राग, द्वेष, मोह और इच्छा है, इसलिए इनसे रहित व्यक्तियों को दान देने से महाफल होता है। इस संसार में दो व्यक्ति दक्षिणा के योग्य है– 1 शैक्ष्य (अर्हत् पद न प्राप्त अर्हत् मार्गस्थ) और 2. अशैक्ष्य (अर्हत्)'' यही दो व्यक्ति दक्षिणा के योग्य हैं, इन्हें देना चाहिए।

इन्हीं खेतों से प्रेरणा लेकर चीवर के स्वरूप का अविष्कार हुआ। मगध देश की चारिका करते हुए सुव्यवस्थित क्यारी बद्ध खेतों को देखकर बुद्ध ने आनन्द से कहा कि ''क्या तुम अपने भिक्खुओं

के लिए इसी तरह के चीवर (बौद्ध भिक्खुओं के द्वारा पहने जाने वाले काषाय वस्त्र) बना सकते हो?'' बस उसी दिन से आनन्द ने कपड़ों के टुकड़ों को जोड़कर क्यारियों के अनुरूप एक चीवर सुई द्वारा सिलाई करके बहुत कुशलता पूर्वक पूर्ण किया। जब इस चीवर को आनन्द ने बुद्ध को दिखाया तो कपड़ों की काट–ब्योंत बहुत पसंद आई। बुद्ध ने कहा कि आनन्द बड़ा पंडित है, ज्ञानी है। इसने तो कुर्सी भी बनाई, आधी कुर्सी भी बनाई, मण्डल भी बनाया, आधा मण्डल भी बनाया, विवर्त भी बनाया अनुविर्वत भी बनाया। ग्रेवयक भी बनाया, जाधिपक भी बनाया, बाहंत भी बनाया। आनन्द को भगवान् की पसंद और ना पसंद को पूरा ज्ञान था। भगवान् के वस्त्रों की सिलाई खास तौर पर आनन्द ही किया करते थे। इस प्रकार (फार्म) क्षेत्र का पर्याय चीवर बन गया अतः प्रक्षेत्र प्रबंध, बंजर भूमियों का उपयोग, प्रक्षेप की बाढ़ (फैसिंग) पानी का साधन, पानी की नाली, सामान ढोने का रास्ता, चलने के लिए सड़कों का निर्माण चीवर को आधार मानकर किया जाता रहा है। किसानों को फार्म (प्रेक्षत्र) का ले–आउट बनाने के लिए भिक्खुओं के चीवर का मार्गदर्शन प्राप्त होता है। अपने देश के लगभग सभी कृषि से संबंधित अनुसंधान केन्द्रों के पास व्यवस्थित फार्म उपलब्ध है और चीवर का साक्षात् प्रभाव इन फार्मों पर स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। अतः बौद्ध धम्म के भिक्खुओं का चीवर कृषि क्षेत्र के लिए प्राचीनतम् आधुनिक प्रणाली है। भिक्खु चीवर की सिलाई किसान के खेतों के मापदण्ड के अनुसार ही करता है।

विनय पिटक

विनयपिटक में भगवान् में बुद्ध ने वायु प्रदूषण से बचने के लिए वनों की कटाई से विरत् रहने का उपदेश दिया है।[ग] कोई भिक्खु को वृक्ष काटने मात्र से पाराजिक नामक अपराध से आपन्न होता है–

''महग्धरूक्खे छिन्नमत्ते पाराजिकं।''

इससे यह पता चलता है कि वृक्षादि तथा तना–पत्तियों का छेदन बौद्धों के लिए अभीष्ट नहीं था। विनयपिटक में भगवान् बुद्ध ने कई अवसरों पर वृक्ष, तृण, बीज आदि को नष्ट नहीं करने का उपदेश दिया है और जो भिक्खु इस दृष्कृत्य को करता है, वो 'पाचित्तिय' अपराध से आपन्न होता है। उदाहरण के लिए– ग्यारहवें वे पाचित्तिय में अपराध तृण, वृक्ष आदि भूतग्राय नष्ट करने से संबंधित है। छप्पनवें पाचित्तिय में कहा गया है कि जरूरत न होने पर भी कोई निरोग भिक्खु तापने की इच्छा से आग जलाए अथवा जलवाए, तो उसे पाचित्तिय कहा गया है।

''यो पन भिक्खुअगिलानो विसिब्बनापेक्खो जोर्ति समादहेय्य ता समादहरपेय्य वा पाचित्तिय'' ति।

विनयपिटक के महावग्ग पालि में वर्णन है–

''इमे पनसमण सवयपुत्तिया हेमंतम्पि.... अनुजानामि, भिक्खवे, वस्त उपगंतुम'' ति।

यह कहा गया है कि पुनश्च अकारण हरे तृणों का मर्दन न हो तथा एक इंद्रिय वाले जीव वृक्ष वनस्पति को पीड़ा न पहुंचे, इसके लिए तथागत ने वर्षावास का विधान किया है। पौधों की रक्षा के लिए उन्होंने बचे भोजन को तृणरहित स्थान पर छोड़ने का विधान किया है–

'नो ये आकंखति अप्पहरिते ना छडेडति, अपप्पर्व व उरूके ओपिलापेति।
तगुलं अप्पहरिते वा छड्डेहि, अप्पाणके वाउदके ओपिलापेही ति।

इतना ही नहीं, सुगत ने प्रथमतः काष्ट की खड़ाऊ का जब निषेध किया, तब कुछ भिक्षु ताड़ के पेड़ों के पत्तों को कटवाकर पत्तें की पादुका बनाकर धारण करते थे। पत्तों के कटने से ताड़ के पेड़ सुख जाते थें तब भगवान् ने एकेंद्रिय जीव वृक्ष की सुरक्षा के लिए ताड़ के पत्ते, बांस के पौधे, तृण, मूंज, वल्वज घास, कमल आदि से निर्मित पादुका का क्रमशः निषेध किया।

भगवान् ने वृक्षारोपण, वृक्षों की सुरक्षा वायु और जल को स्वच्छ रखने के लिए बल दिया। नगरों, गांवों का गंदा जल, जलाशयों और नदियों में मिलकर जल को प्रदूषित कर देता है। जल के स्रोतों को प्रदूषण से बचाने के लिए सम्यक सम्बुद्ध के उपदेश विनयपिटक में यत्र–तत्र बिखरे पड़े हैं।

आधुनिक विष्व, बौद्ध धर्म और पर्यावरण

विश्व में मानव एवं उससे संबंधित, आवश्यकता, इच्छा एवं विलासिता के जीवन में खाद्यान्न, ईंधन, काष्ठ तथा पशु चारे का प्रबंध महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस समय भारत में पैंतालिस प्रतिशत से अधिक भू–भाग पर खेती की जाती है तथा 21 प्रतिशत पर वन क्षेत्र स्थित है परन्तु दोनों ही पद्धतियां एक दूसरे की पर्यायवाची है, अतः कृषि एवं वनों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। यहां तक कि नगरीय विकास में भी वन किसी न किसी रूप में मानव जीवन के साथ जुड़े हुए हैं।

परन्तु आधुनिक विश्व में अनेक प्रकार के मानव निर्मित रसायन कृषि क्षेत्र में उतारे गए हैं, जिसमें उर्वरक एवं पादक–संरक्षण रसायन मुख्य हैं। यह रसायन वास्तव में मानव, पशुधन तथा संपूर्ण जीवनजगत के हानिकारक है। इस प्रकार की आवाज सर्व प्रथम रसैल कार्सन द्वारा अपनी पुस्तक 'साइलेंट स्प्रिंग' के माध्यम से उठाई गई और एक के बाद एक पर्यावरण संबंधी संस्थानों का निर्माण होता चला गया। वास्तव में पर्यावरण संरक्षण के प्रति लोगों का ध्यान 'द्वितीय विश्व युद्ध' की समाप्ति के बाद ही आकर्षित हुआ, क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध में अनेक रसायनों का व्यवसायिक हल खोजा गया। परंतु इतिहास के पन्नों पर दृष्टिपात करने से पता चलता है कि छबीस सौ (2600) ईसवी पूर्व चार महान सिद्धांतों का विश्व स्तर पर प्रचार हुआ, जिसमें भारत में बौद्ध मत के संस्थापक भगवान् बुद्ध, जैन मत के संस्थापक भगवान् महावीर के साथ–साथ चीन और जोर्डन के विद्वानों ने भी मानव कल्याण के सिद्धांतों की स्थापना की। वास्तव में प्राचीन भारतीय मान्यताओं में बौद्ध धर्म प्रारंभ से ही वृक्षों, जंगलों तथा पशुधन, मानव के कल्याण की वकालत करता है। बौद्ध धर्म जंगल पर्यावरण संरक्षण में प्रत्येक प्रकार की जीव वनस्पति को अहिंसक रूप से विचरण करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। अतः बौद्ध धर्म की धार्मिक मान्यताएं कालांतर में प्रचलित मान्यताएं बन गई।

इस दिशा में 'सम्राट अशोक' ने विस्तार से प्रचार–प्रसार कराया। विभिन्न प्रकार के आयोजन कराए। बीमारी, पुत्र की शादी, बच्चे का जन्म, घूमने पर जाने से पूर्व एवं वापसी पर स्त्रियां बहुत से आयोजन बिना किसी प्रयोजन के करती हैं, जिनका कुछ भी परिणाम नहीं होता। पालि तथा बौद्ध साहित्य में भी पक्षी, यज्ञ, चैत्य, गंदर्भ, नागपूजा आदि आयोजनों के प्रमाण मिलते हैं। लेकिन सम्राट अशोक ने सभी संस्कारों के साथ–साथ नैतिकता के संस्कार की स्थापना कराई, जिससे भारत को विश्व स्तर पर प्रसिद्धि मिली। सम्राट अशोक ने तथागत के समता, करूणा और बंधुत्व को न केवल अपने जीवन में उतारा, बल्कि आम जनता में इन नियमों को स्थापित करने के लिए धर्म यात्राएं भी कीं। ऊपरी तौर से भले ही भारत में बौद्ध धर्म नहीं दिखाई देता, लेकिन भारत एवं विश्व की निचली सतहों में बौद्ध धर्म दबा हुआ है।[गप] तथागत का धार्मिक आंदोलन ध्वनि प्रदूषण को प्रोत्साहित नहीं करता, अनावश्यक ध्वनि, प्रायः साधारण व्यक्ति को एकाग्र होने में बाधा उत्पन्न करती है। यही कारण है कि बौद्ध मूर्तिकला में कहीं भी तथागत व अन्य भिक्षुओं को बिना जूते अर्थात् नंगे पैर देखा जा सकता है। बौद्ध ग्रंथों में बार–बार वर्णन आया है कि जब भगवान बुद्ध धर्म उपदेश करते थे तो उनको सुनने वाले बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। उनके अनुशासन की यह विशेषता थी कि बड़ी संख्या में उपस्थित होने के बावजूद भी वहां के वातावरण में घोर शांति होती थी। वहां इतनी शांति होती थी कि आप सूई के गिरने तक भी आवाज सुन सकें। ध्वनि प्रदूषण संरक्षण की दिशा में निश्चय ही यह प्रयास मील का पत्थर सिद्ध होता है।

शव–विसर्जन के संदर्भ में भी तथागत के विचार बेहद व्यवाहारिक थे। उनकी मान्यता थी कि काल परिस्थिति और आवश्यतकता के अनुसार ही शव–विसर्जन करना चाहिए। यदि अधिक पानी वाला क्षेत्र हो तो शव को जल प्रवाहित करना चाहिए तथा वनस्पति और जल के अभाव में उस क्षेत्र में शव को जमीन में गाड़ना ही उचित होगा। जहां लड़ी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो वहां शव का दाह संस्कार करना ही उचित होगा। तथागत की यह देशना थी कि शव का दाह संस्कार करना ही उचित होगा, क्योंकि किसी अन्य विधि से शव का विसर्जन किया जाए तो शव का अवशेष एवं विषाणु आस–पास के क्षेत्र में रह जाते हैं तथा क्षेत्र को प्रदूषित करके महामारी का कारण हो सकते हैं। दुनिया में मात्र बौद्ध धर्म ही एक ऐसा बुद्धिवादी धर्म है, जिसके मानने वाले भारतवर्ष में अपने शवों का दाह संस्कार करते हैं, जबकि थाईलैंड में शव को जल प्रवाहित करते हैं तथा चीन, कोरिया और जापान में जमीन में गाड़ देते हैं परंतु फिर भी चेचक आदि परजीवी विषाणुओं के कारण मृत्यु को प्राप्त लोगों को किसी भी सूरत में जमीन में ही गाड़ा जाता है।

मनुष्य के जीने के लिए सर्वप्रथम शुद्ध वायु की आवश्यकता होती है। आज वैज्ञानिक युग में इसे आक्सीजन (02) का नाम दिया गया है। यह वायुमंडल में 20 प्रतिशत मात्रा में है। इसके पश्चात् शुद्ध जल की बारी आती है, जो पशु–पक्षी, पेड़–पौधों के लिए तथा मानव के लिए अपर्याप्त हो गया है। सिद्धार्थ गौतम के गृहत्याग का मुख्य कारण जल ही था। रोहिणी नदी के जल बंटवारे से उपजे विवाद (क्षत्रिय और कौलियों के बीच का विरोध) में गौतम सिद्धार्थ ने शस्त्र उठाने की बजाय कपिलवस्तु क्षेत्र से बाहर निकलकर जीवन यापन करना बेहतर समझा। 'जातक कथाओं' ने बुद्ध के पुर्नजन्मों की विभिन्न योनियों की कथाओं को लकड़ी, शिक्षा, शैल–चित्रों में उतारकर आने वाली पीढ़ी का मार्गदर्शन करने का उचित प्रबंध किया।[गपप] आज के समय में जबकि प्रदूषण के कारण पर्यावरण को लगातार हानि हो रही है, जिसके फलस्वरूप पृथ्वी के ऊपर निर्धारित ओजोन 03 परत जो सूर्य की अल्ट्रावॉयलेट किरणों से मानव और पशु धन की रक्षा कर रही है, वह नष्ट होती जा रही है। 0.5 प्रतिशत घटोतरी के साथ भयानक खतरा पैदा हो गया है। रैफरीजेटर, एइटोसोल, कम्प्यूटर स्पेज आदि से उत्पन्न C+CL2 क्लोरोफ्लूरो कार्बन से मुख्य खतरा पैदा हो गया है। यह कार्बन ओजोन लेयर 03 के लाइट अणुओं को नष्ट कर देता है, परंतु आज हम बुद्ध द्वारा निर्धारित नियम पालन से ही पर्यावरण की रक्षा कर सकते हैं।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी बौद्ध भिक्षुओं का एक बहुत बड़ा योगदान रहा है। आचार्य, जीवक जो भगवान् बुद्ध के भी बैद्य थे, के वर्णन के बिना आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र का इतिहास पूरा नहीं होता। उस समय की शिक्षा–पद्धति में जड़ी बूटियों का इतना सूक्ष्म ज्ञान था कि शल्य क्रिया अर्थात् ऑप्रेशन संपन्न करने के लिए देसी जड़ी–बूटियों और एक्यूप्रेशर के माध्यम से स्नोस्थिसिया (बेहोश करने वाली प्रक्रिया) दी जाती है।

कृषि, वन, क्षेत्र पर्यावरण और बौद्ध धर्म अभिन्न रूप से एक दूसरे के पूरक हैं। बिना कृषि, वृक्ष–वन के ओर पर्यावरण के बौद्ध धर्म की बात पूरी नहीं हो सकती। साथ–ही–साथ यह भी सत्य है कि बौद्ध धर्म के बिना कृषि, वन–वृक्ष और पर्यावरण के विषय में न्यायपूर्ण ढंग से सोचा नहीं जा सकता। संपूर्ण मानवजाति के इतिहास में सबसे पहले 'जातक कथाओं' के माध्यम से भगवान् बुद्ध ने ही पशु–पक्षियों के मध्य वार्तालाप के द्वारा ही अपने धर्म के गूढ़ रहस्य को आकर्षक शैली में जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत किया।[गपपप] जातक कथाओं की इस शैली से प्रभावित होकर गुणाढ्य द्वार वड्डकहा (प्राकृत भाषा में), विष्णुशर्मा द्वारा पंचतंत्र, क्षेमेन्द्र द्वारा वृहद्कथा–मंजरी (संस्कृत में), सोमदेव द्वारा कथा–सरित सागर तथा हितोपदेश की कहानियों की रचना की गई। और तो और, यूरोप में ईसप की कहानियां, अरब में सुप्रसिद्ध अलिफ–लैला (अरेबियन नाइट्स) में भी जातक कथाएं स्पष्ट रूप में देखी जा सकती है। बौद्ध धर्म का सूक्ष्म अध्ययन करने के बाद यह ज्ञात होता है कि भगवान् बुद्ध पशु हिंसा के प्रबल विरोधी थे। वर्ल्ड वाइल्ड लाईफ फंड (यूएनओ) एवं माननीय मेनका गांधी जी वर्तमान युग में वन्य जीवन संरक्षण का आंदोलन चला रहे हैं और संसार भर के वन्य–जीवन प्रेमी पशुधन के संरक्षण के लिए आवाज बुलंद कर रहे हैं। उत्तरांचल में सुंदरलाल बहुगुणा चिपको आंदोलन के माध्यम से वन संरक्षण आंदोलन का सूत्रपात कर रहे हैं। बौद्ध देशों की बात करें तो थाईलैंड में 1998–99 में हजारों पेड़ रोज लगाने का अभियान चला, जिसके तहत एक करोड़ पेड़ वहां के निवासियों ने लगाए। इधर 5–6 साल से बौद्ध विदेशी भिक्षुओं के वस्त्र लपेट कर पेड़ों को बौद्ध भिक्षु बना रहे हैं, जिससे भू–माफिया उस पेड को नहीं काटते, क्योंकि भिक्षु बने पेड़ को काटने से भिक्षुवध का दोष लगता है।

पत्थर माफिया से पत्थरों को बचाने के लिए बौद्ध देशों में पर्वत की बड़ी–बड़ी चट्टानों पर बुद्ध व उनके अनुयायियों की मूर्तियां बना देते हैं, जिससे स्टोन माफिया उस पर्वत को नुकसान नहीं पहुंचाते। आज यदि आप बौद्ध मठों में जांए तो वहां आप भिक्षुओं को शेरों की सवारी करते देख सकते हैं, क्योंकि बौद्ध मठों में आज भी शेरों को पालते हैं और उनकी सवारी करते हैं यह आप थाईलैंड में देख सकते हैं।

संदर्भ

[i] देखें हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर द्वारा विंटर निट्ज
[ii] देखें महापरिनर्वाण सुत्त
[iii] देखें अट्ठकथा साहित्य
[iv] देखें जातक कथाएं
[v] देखें कुटदन्त सुत्त (दीघ निकाय अट्ठकथा)
[vi] देखें धम्मपद
[vii] देखें थेरगाथा
[viii] देखें मिलिन्द प्रश्न
[ix] देखें उदान कथाएं
[x] देखें विनय पिटक 'महावग्ग पालि'
[xi] देखें अशोक की धर्म यात्रा 'लघु शिलालेख स्तंभ सं. 1'
[xii] देखें जातक कथाएं
[xiii] वहीं

RRIJM 2015, All Rights Reserved